सद्गुरु तत्व बोध
SADGURU TATV BODH

नई दिल्ली
अंक – 175

www.saikalpadhyatmsanstha.com

श्री साई शक : 37
मई–जून – 2019

॥ ॐ श्री साईनाथाय नमः॥
॥ ॐ श्री सदगुरूनाथ दादाय नमः॥

गुरूवाणी

Publisher
Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
"Sai Niketan"
New Delhi - 110025
Ph. : 26956561
E.mail : saikalp@gmail.com
dadab6@gmail.com

Patron
Anand Bapshet

Editorial
Vijay Kumar Varma
Jogesh Grover

Subscription
Inland
Yearly : Rs.250.00
Life time : Rs.1000.00

Overseas
Yearly : US$ 250.00
Life time : US$ 500.00

Printed By
Soni Printers
Cell : 09718657567

Published Every Month

©All rights reserved with Publisher

गुरूबंधु भगिनियों

जन्मोजन्मो का सेवक – दादा भागवत

दिनांक : 01 जून 1992

– मानवीय जीवन की प्रगति होने के बजाय वह गतिमान होकर जीवन सुखों के अभाव में दुःखमय हुआ है। जब अपनी खोज खबर हम स्वयं ही लेंगे तब सुख है या नहीं इसका पता चलेगा। क्योंकि सुखों के पीछे कौन है? सुखों के लिये कौन कारणीभूत है?तो हमारे संस्कार। परन्तु आज के जग में संस्कार विधीपूर्वक न करके वह एक फैशनेबल विधि बन गया है। इसलिये हम मानवों का जन्म बारहवें दिन उदीत न होकर, आगे उसका बारवाँ (विधि) करना पड़ता है।

– हमें मंत्र, त्रंत, यंत्र इनका उच्चार करना नहीं आता है उसके कारण देवों के देवत्व का अनुभव मिलने में दीर्घकाल लगता हैं और यदि यह त्रिपुटी हमें अवगत हुई तो ही ईश्वर का प्रसाद मिलता है। 'देव' कहने पर अपने अंदर भाव होना आवश्यक होता है। हम जो केवल पूजापाठ आदि करते हैं। वह कर्म हमारे द्वारा केवल औपचारिक तौर पर होता हैं जिससे इष्ट फल प्राप्त होगा ऐसा नहीं होता। देवों की प्रतिमा एवं उनकी स्थापना हमारे जीवन में जीवित हो ऐसी यदि हमारी इच्छा हो तो उसके लिये तपश्चर्या करनी पड़ती है।

– जन्म लेते समय जो संस्कार है। उन संस्कारों को मानना याने समाज में रूढ़ीवादी या हीन समझा जाता हैं इसलिये हम उनको टालते रहते हैं। और अंत में अपना जीवन टाल बजाते बैठता है। आज हमें भगवान नहीं चाहिये परन्तु जीवन में दुःख आने पर हम "भगवान" को ही पुकारते है। परन्तु उसका प्रतिसाद सुनाई नहीं देता क्योंकि हम भगवान को मानना ही भूल चुके हैं।

– जग को सुख देने के बजाये सुखों का मार्ग बताओ।

– वास्तविकता में गुरूमार्गी होने पर गुरू जो मार्गदर्शन करते हैं उसी प्रकार से नम्रतापूर्वक उसका अचरण करना ही सही मायने में कुलधर्म, कुलाचार है। भक्तों का कल्याण हो ऐसी सदगुरू की इच्छा होती है। इसलिए आसान से आसान सेवा हम बताते हैं, फिर भी कुछ अलग सा व्यवहार करना याने गुरूमार्ग में ऐसा अर्थ हम लगाते हैं और दूसरों को भी वैसा ही आभास कराते हैं। परन्तु यह अर्थ भविष्य में हमारे अनर्थ की नींव है। इसे मत भूलना।

प्रथम शुभ दिन

दिनाँक : 20 जून 1992

गुरूबन्धु–भगिनियों

श्री सद्गुरूनाथ दादा का शुभ दिन मनाने के लिए हम यहाँ एकत्रित हुए हैं। एक साल पहले इसी दिन हम पूना में द्वारकामाई में एकत्रित हुए थे। उस वक्त की हमारी मनःस्थिति और हमारी आज की मनःस्थिति इसमें बहुत अन्तर हैं पिछले साल हमारे मन में दुःख था, गुरू वियोग के कारण महसूस होने वाली आधार रहित अवस्था ऐसे भाव थे। तो आज हमारे अन्दर आत्मविश्वास एवं निराधार ऐसे भाव है। इसका सम्पूर्ण श्रेय हमारी गुरूमाऊली को है। उन्होंने जिस पद्धति से जीवन व्यतीत किया, उसी अत्यानन्द के आविष्कार में उन्होंने इहजगत को अलविदा कहा। "मृत्यु मारुनी अमर जाहलो" इस अवस्था को स्वयं में धारण कर, कुछ वक्त पहले काल को थाम कर रखा और अपना कार्य पूर्ण किया। 'इस कार्य को आगे जारी रखने के लिये माध्यम तैयार किये। और अपने पीछे अपनी शक्ति को रखकर, इतना ही नहीं बल्कि अपनी देह के माध्यम में तन्मात्राओं, कोष इनको अपने से अलग कर इहलोक में रखा और अपने शरीर को मृत्यु के आधीन किया।" उनके माथे की खड़ी रेखाएँ, उनके गजमुखी घुटने, उनका आहार, उनके पलंग के नीचे की दो ईंटें उनकी व्हील चेअर, इतना ही नहीं बल्कि जिस प्रकार से देह त्याग हुआ उसमें एवं श्री साईनाथ महाराज में बहुत अधिक साम्य दिखाई देता है।

नाही पडून वा निजुन। स्वस्थपणे गादीसी बैसुन।
ऐसा स्वहस्ते धर्म करून। किले विसर्जन देहाचे।
समर्धाचे मनोगत। न होता कोणासही अवगत।
देह विसर्जिला हातोहात। ब्रह्मीभूत् जाहले।
लोकसंग्रहार्थ जो अवतरला। कार्य सपंता अवतार संपविला।।
तो काय जन्म मरणाचा अंकिला। विगृह स्वलीला धरितोतो।।
दिसला जरी कर्मी प्रवृत। कभी न कर्मे केली व्यक्तिचीत।।
सदा कर्मी अकर्म देखत। अंहकार रहित तत्वे।।

इस प्रकार से श्री साईनाथ महाराज जी के देह विसर्जन का वर्णन है। जो कि वं. दादा के बारे में भी पूर्णतः लागू होता है। मृत्युसमय में मनुष्य शक्तिहीन होकर बिस्तर पर लेटा रहता है। परन्तु वं. दादा ने जब देहत्याग किया तक वे बैठी हुई अवस्था में थे। मतलब पाचों कोश, इडा–पिंगला–सुशुम्ना नाड़ीयाँ और शटचक्र खड़ी रेखा में थे। इस प्रकार की मुद्रा में देह में से विभक्त होने वाली शक्ति सप्तलोक के पार चली जाती है। इसका मतलब वह अखिल विश्व को व्याप्त करके रहती है। ऐसी अलौकिक अवस्था हमारे गुरूमाऊली ने प्राप्त की। इसका अर्थ वह हम भक्तों को छोड़कर चली गई ऐसा न हो कर :

"उडाली पाक्षिणी गेली अंतराली। चित्त बालाजवली ठेबूनिया।"

इस प्रकार की अवस्था आज है। जिस द्वारकामाई के कमरे में "गुरूपीठ" स्थापित हुआ है वह स्थान वं. दादा ने आगे के कार्य के लिए रिक्त रखा था। इतना ही नहीं बल्कि एक साल पहले ही उस स्थान की शुद्धता करके वहाँ पर स्वयं ने गणपति पूजन किया था। फिर उन्होंने अगली प्रक्रिया को प्रारम्भ किया।

आगे आने वाले वक्त के लिये और बदले हुए जग के लिये "दत्त तत्व" को नये स्वरूप में साकार करना यह महान कार्य श्री साईबाबा एवं वं. दादा ने किया। एक ऐसा गुरूमार्ग निर्माण किया जिसमें दत्तपंथ का वैराग्य नहीं। नाथ पंथ के यमनियम नहीं और सूफी पंथ की प्रखर गुरूभक्ति भी नहीं। श्री साईनाथ ने "कलयुगी अवतार" के रूप में जन्म लिया और उस दत्तावतार में समाये हुए तत्वों को वं. दादा ने सिद्ध किया। प्रथमतः 3 मुख याने उपंथ, दत्त–नाथ–सुफी इनके आशीर्वाद प्राप्त कर दत्ततत्व के एक–एक आयुद्य को दादा ने सिद्ध किया। दाहिने हाथ में चक्र याने "वंशविमोचन", गदा याने "कर्मविमोचन", त्रिशुल याने "ऋणमोचन" और बायें हाथ में "शंख" याने ऊँकार साधना, कमंडल याने "निराकरण" एवं कमल याने "सेवक अवस्था", पादुकाएँ याने "गुरूदीक्षा" है। दत्तगुरू के जिस हाथ में कमल है वह हाथ गाय की पीठ पर है। इसका मतलब आज की सामाजिक परिस्थिति में सेवक ने कमल के समान खिलना है और जगत को प्यार से अपना बनाना है। यदि इस चित्र को आँखों के सामने लाये तो सवेक अवस्था कितनी अमूल्य है, इसे हम समझ पायेंगे। दत्त भगवान के तीन मुख हमें दिखाई देते हैं और इन तीनों का सार–चौथा मुख में पीछे की ओर है जो कि दादा के रूप में हमारे सामने साकार हुआ है।

माँ अपने बच्चे के लिये अलग–अलग पदार्थ बनाकर उसे सुदृढ़ बनाती है। उसी प्रकार से अलग–अलग विभूतियों की

कृपा से सिद्ध किये हुए कई साधनों का लाभ हम लेते आये हैं। परन्तु जिस गुरूमाऊली ने प्रखर परिश्रम से यह सिद्धता की उसके सामर्थ्य के कौशल्य के, गुणों के बारे में हमने सोचा ही नहीं। उसी प्रकार से जगत को तारने वाली 9 शक्तियों को सौम्य स्वरूप में साकार कर उन्हें एक रूप करने के लिए कितना सामर्थ्य लगा होगा। इसके बारे में भी हमने नहीं सोचा। उसके बारे में सूफी विभूतियों ने विचार किया और जिन वं. दादा ने उन्हें कार्य कराने के लिये फिर से अस्तित्व में लाया, उनका अस्तित्व भविष्य के जग के लिए अस्तित्व में आये इसलिये कार्य योजना तैयार की गई। इसे समझाने के लिये आज आपको द्वारकामाई में बुलाया गया है।

इस कार्य का पहला भाग याने पिछले साल श्री सद्गुरूनाथ दादा इनकी पादुकाओं की स्थापना की गई और वहाँ पर सम्पूर्ण सालभर भक्तभाविकों के हाथों अभिशेक, पूजन इत्यादी विधि किये गये। अब इस योजना का दूसरा भाग याने वं. दादा की शक्ति को प्रवाहित करना। उसके लिये जो दीक्षा आवश्यक है वह आज आपको सिद्ध अवस्था में प्राप्त हो रही हैं।

इस योजना के आरम्भ में जनवरी 1992 में जो सेवक सम्मेलन लिया गया था। उससे पहले आशीर्वादार्थ हम कल्याण में प. पू. हाजीमंलग बाबा के दर्शनार्थ गये थे। तब वहाँ पर ऐसी आज्ञा हुई कि उनके उरूस महोत्सव के बाद सारे सूफी संतों के दर्शनार्थ जाकर आयें, फिर अगली योजना ज्ञात होगी। उस प्रकार से सफर की योजना बनाकर हम 7 सेवक, 9 दिनों में करीब 4500 किलोमिटर का सफर कार से करके प्रथम शिर्डी में श्री साईनाथ महाराज, उसके बाद में अजमेर–ख्वाजा मोईउद्दीन चिश्ती, फतेहपूर सीकरी – ख्वाजा सलीम किश्ती, दिल्ली में ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार, गुलबर्गा में ख्वाजा बंदे नवाज और बालेकुंद्री में श्री पंत महाराज उनके दर्शन लेकर आये। इसके अलावा प. पू. महमद जिलानी इनकी दरगाह बगदाद में है उनका भी स्मरण करके प्रार्थना की। ऊपरी हरेक स्थान पर हमें एक अलग ही अनुभव प्राप्त हुआ और वं. दादा इन विभूतियों को कितने प्रिय है और शिष्य का नाम अजरामर करने के लिये ये गुरूजन कितने उत्सुक हैं इसे देखकर हमारी आँखें भर आई। परन्तु सबसे आलौकिक एवं महत्वपूर्ण प्रसंग शिर्डी में घटित हुआ जो कि अवर्णनीय है।

हम लोग गुरूप्रतिप्रदा के दिन शिर्डी पहुँचे। सुबह के 11 बजे होंगे। हमेशा के समान हमने प्रथम श्री अब्दुल बाबा का दर्शन किया और "द्वारकामाई" में गये। उससे पहले हमने साधना की। उस वक्त आज्ञानुसार एक कोरे कागज को एक लिफाफे में डालकर सामन रखा था। जिस स्थान पर प्रेरणा होगी, वहाँ पर उस कागज पर उन विभूति की आज्ञा लिखनी ऐसा तय किया था। क्योंकि तीर्थयात्रा की आज्ञा क्यों हुई यह किसी को भी ज्ञात नहीं था। हमारे "द्वारकामाई" में प. पू. बाबा के सामने वीडे रखे और ऊपर लिखा कागज का लिफाफा भी आशीर्वाद के लिए रखकर प्रार्थना करके खड़े थे। तभी कहीं से एक युवा पुजारी वहाँ पर आया। पलभर खड़े रहकर उसने उस लिफाफे को उठाया। उसे प. पू. बाबा के हृदयस्थान पर लगाया और हमें वापस देकर वहाँ से निकल गया। उस वक्त मंदिर में आरती हो रही थी। और "द्वारकामाई" में भीड़ भी नहीं थी। हम थोड़ी देर वहीं पर बैठे और फिर निकले। उससे पहले बस यूंही उस लिफाफे को खोला और उस कागज को बाहर निकाला और जैसे कोई बिजली चमकी हो ऐसा अहसास हुआ। उस कागज पर लाल स्याही से "श्री सद्गुरूनाथ दादा" का मंत्र लिखा था। हम कुछ देर तक सन्न अवस्था में बैठे रहे। क्या दुनिया में ऐसी घटना कभी घटित हुई होगी? गुरू के कार्य को बड़ा करने वाले अनेक शिष्य हुए। परन्तु शिष्य का 'नाम' सिद्ध करने वाले गुरू जगत में एक ही है। शिष्य के द्वारा किये गये कार्य के प्रति, उन्होंने व्यतीत, समर्पित किये जीवन के प्रति गुरू द्वारा दिया गया ये प्रतिसाद है। उसी प्रकार वह एक प्रकार से मान्य की गई कृतज्ञता है। शिष्य गुरू का ऋणी होता ही है। परन्तु गुरू ने शिष्य का ऋणी होना क्या जग के इतिहास में ऐसा उदाहरण हुआ होगा?

हमने वं. दादा को केवल गुरू स्थान पर माना, परन्तु कामकाज, निराकरण इनसे आगे हमने कभी सोचा ही नहीं। जब वे बिमार थे और कामकाज के लिए सेवकों की नियुक्ति करने पर भी कई भक्त केवल उन्हें ही मिलने की इच्छा प्रदर्शित करते थे। परन्तु उन्होंने उसके प्रति कभी नाराजी व्यक्त नहीं की। कुबेर के पास जाकर बासी खाकरी (रोटी) मांगने जैसा वो प्रकार था। फिर भी हम भक्तों ने उसे भी किया। परन्तु दादा ने फिर भी हमारा दुस्वास (गुस्सा, सिड़कना) नहीं किया, बल्कि अपनी सम्पूर्ण शक्ति को वे यहीं पर रखकर गये हैं।

आज दुनिया में गुरू कहने पर जो चित्र आँखों के सामने आता है उससे वं. दादा बहुत ही अलग थे। "परमार्थ" इस विषय से संलग्न शब्द "गम्भीरता" को अलग हटाकर इस विषय को हँसते–खेलते हुए हमारे सामने रखा। दुनिया के हर विषय के प्रति दिलचस्पी रखी। मानव के रूप में कैसे जीवन व्यतीत करें इसका उदाहरण हमारे सामने रखा। और उससे भी अधिक कभी भी स्वयं की शक्ति एवं कार्यक्षमता का प्रदर्शन न कर हमेशा नम्रभाव रखा। और जो सिद्धता कर रहे थे, उस हरेक सिद्धता का श्रेय विभूतियों एवं श्री गुरू को दिया। श्री साईनाथ महाराज, पंत महाराज और विभूति प्रसन्न होकर उनके साथ सम्पर्क

करते हैं, बातें करते हैं, इसका उन्होंने प्रदर्शन नहीं किया। उसके बजाये ऐसी जिद पकड़ ली इन विभूतियों की सहायता से ऐसी सिद्धता एवं ऐसा कार्य करके रखूंगा कि आने वाले एक हजार साल में परमेश्वर को मानवीय कल्याण के लिये अवतारी पुरुष को जन्म देने की आवश्यकता महसूस न हो। "गुरूमाऊली" इस तत्व को वं. दादा ने सार्थक किया और भक्तों से उन्होंने पैसों की ही नहीं बल्कि सेवा की भी अपेक्षा नहीं रखी।

जो आशीर्वाद एवं जो कृपा उन्हें विभूतियों से प्राप्त हुई थी उसे उन्होंने वृद्धिगत किया। शिर्डी से पहले उन्होंने उदी लायी और उसे वैसे ही लोगों को नहीं दिया गया। बल्कि उसके बाद में आठ दिन तक सद्गुरू नामस्मरण किया गया। उस वक्त उस उदी में गुलाब की खुशबु आ रही थी। प. पू. बाबा ने दैनंदिन प्रार्थना लिख कर दी उसमें अगले एक जन्म की तरतूद करने का आशीर्वाद था। वं. दादा ने उसे वृद्धिगत कर अगले अनेक जन्मों की तरतूद करने की सिद्धता की। उस वक्त प. पू. बाबा ने ही "जन्माची" (जन्म की) इस शब्द में "जन्मांची" (जन्मों की) ऐसा बदलाव करने के लिये कहा। श्रद्धा एवं सबूरी यह वं. दादा का स्थायीभाव था। प. पू. बाबा पर उनकी जो श्रद्धा थी उसमें उन्होंने लोक अपवाद, मान–अपमान, निन्दा इनके कारण अंशमात्र भी कमी नहीं आने दी और गुरूकृपा का उपयोग स्वयं के परिवार की समस्याओं के लिये कभी नहीं किया। ऐसे हमारे सद्गुरू थे। जिनके बारे में प्रेम, दयालु, त्याग ये शब्द ही अधूरे लगते हैं ऐसे ये सद्गुरू जिनकी महती, जिनकी सामर्थ्य हम जान ही नहीं पाये। आज सूफी विभूतियों की सिद्धता के मार्गदर्शन द्वारा हमें यह लाभ प्राप्त हो रहा है।

इन मंत्रों की सिद्धता के लिये सारे विभूतियों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। हरेक दरगाह में साधना एवं श्री सद्गुरूनाथ दादा के तारक मंत्र के पुरश्चरण के लिये हमें जगह प्राप्त हुई। हरेक स्थान पर हमें अलग–अलग अनुभूति मिली। दिल्ली में ख्वाजा कुतुबुद्दीन की दरगाह के अहाते में उनकी समाधि से काफी दूर हम साधना के लिये बैठे, तो हम कर रहे ऊँकार का उच्चार समाधि के ऊपर की घुमट में से ध्वनि हो रहा था। और वहाँ के मुजावर लोग, यह आवाज कहाँ से आ रही है, उसे आश्चर्यपूर्वक देख रहे थे।

इस तीर्थयात्रा से वापस आने पर इस तारकमंत्र का पुरश्चरण कर अब सिद्धस्वरूप में उसका हमें लाभ हो रहा है। इस काल में साधना करते वक्त एक दिन हम सबने श्री गोरक्षनाथ जी का आदेश याने जोर से उच्चरित किया। "अलख" इस शब्द को भी हमने सुना। इसलिये तीनों पंथ के आशीर्वादों से युक्त ऐसा यह मंत्र आज जगत में सबसे सामर्थ्यवान है। इसका अनुभव भक्तिलय में हरेक को प्राप्त होगा। जिन विभूतियों के गुणवर्णन पदों को आज हमने सुना उन सभी विभूतियों का सामर्थ्य इस ऊपरी मंत्र में है। इसलिये आज का दिन अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी दिन सात साल पहले हमें महाकारण दीक्षा प्राप्त हुई थी। उस वक्त ऐसा बतायाा गया था कि विश्वशांति के लिए आवश्यक ऐसा एक तारा पृथ्वी के समीप आया है। यद्यपि वे दिखना सम्भव नहीं है फिर भी उसकी लहरों का आना प्रारम्भ हुआ है और उसका अस्तित्व 15 साल तक रहेगा। अब उनमें से 8 साल बाकी है और इसमें बहुत बड़ा कार्य करना है, गुरू की महत्ता शिष्यों के कारण दुनिया के सामने आती है। शिष्यों ने गुरू के कार्य को नामलौकिक प्राप्त करवाना याने गुरू का नाम बढाना और इस कर्त्तव्य को हमें करना है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण बात याने सारी विभूतियाँ हमारे साथ है। और उनका सहयोग और आशीर्वाद हमें प्राप्त होगा। परन्तु इस कार्य को करते वक्त वं. दादा हमेशा कहते थे उसके अनुसार "अहंकाराचावारा न लागो माश्या राजसा" इसका हमें ध्यान रखना चाहिये। यह जग शून्य से लेकर नौ अंकों में समाया है। उसके बाद में उसी अंक की पुनरावृत्ति होती है। श्री सद्गुरूनाथ दादा ने शून्य अवस्था को प्राप्त कर इन सब का जो कार्यकारण भाव है उसके गणित को खोज निकाला और 1 से 9 अंक सिद्ध कर श्री साई शके 9 में इहलोक को अलविदा कहा। अब हमें इस गुरूऋण में से मुक्त होने के लिये जो जीवन व्यतीत करना है। उसके लिये आज के शुभदिन पर श्री गुरूचरणों में आइये हम लोग प्रतिज्ञा लेते हैं।

"हम गुरूभक्त श्री सद्गुरूनाथ दादा के चरणों में ऐसी प्रार्थना करते हैं कि आपने जो लोक कल्याण का कार्य जग के कल्याण के लिये स्थापित किया है और हमारे जीवन जिस कार्य के कृपाशीर्वादवश विकसित और समृद्ध हुए है, उस कार्य को जगत में वृद्धिंगत करने के लिये, हम खून की बूँद–बूँद द्वारा कर्त्तव्य निभायेंगे। ऐसी प्रतिज्ञा आज आपके चरणों में कर रहे हैं।

।। शुभं भवतु ।।

"इसके आगे हम हर साल में एक बार अपने परिवार के सदस्यों के साथ इस गुरूपीठ का दर्शन और हर दो साल में एक बार गोवा के शक्तिपीठ के दर्शन लेने का परिपाठ पूर्ण करेंगे।"

पहले के जमाने में ऐसी पद्धति थी कि हरसाल कुल देवता के दर्शन के लिये जाना। आज ये दोनों पीठ हमारे तीर्थक्षेत्र हैं। जहाँ पर हमारे घराने की अगले कई पिढ़ीयों की तरतूद है। जिसे परब्रह्म कहते हैं वह और कहीं न होकर मेरे श्री गुरू के चरणों में हैं। ऐसा दृढ़ विश्वास अपने भीतर निर्माण होना चाहिये। तभी निरंतर ऐसे ब्रह्मानंद की अनुभूति हम सबको प्राप्त होगी।

सेवक